Naveen Shodh Sansar (An International Refereed / Peer Review Multidisciplinary Research Journal)
RNI No.- MPHIN/2013/60638, ISSN 2320-8767, E- ISSN 2394-3793, Scientific Journal Impact Factor (SJIF)- 8.054,
January to March 2026, E-Journal, Vol. I, Issue LIII (53), ISO 9001:2015 - E2024049304 (QMS)

श्रीशिवमहापुराण की सूक्तियां का दार्शनिक अनुशीलन एवं आलंकारिक वैशिष्ट्य

भुवनेश गिरि *

* शोधार्थी, संस्कृत, ज्योतिर्विज्ञान एवं वेद अध्ययनशाला, सम्राट विक्रमादित्य विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध शिव महापुराण की विविध संहिताओं में निहित कुछ प्रमुख सूक्तियां के दार्शनिक और अलंकारिक पक्ष का अध्ययन करता है शोध का उद्देश्य यह है कि शिव महापुराण में केवल धार्मिक कथाओं का संकलन नहीं है अभी तो दार्शनिक सत्य को अलंकारों के माध्यम से जनमानस के लिए हृदय ग्राही रूप में प्रस्तुत करना है। इसी शोध में उपमा रूपक काव्य लिंग कारण माल जैसे अलंकारों का शास्त्रीय लक्षणों के आधार पर विश्लेषण किया गया है। निष्कर्ष रूप में यह शोध पत्र विषय को सिद्ध करता है कि भक्ति – विज्ञान और वस्त्र– रंग न्याय के प्रमुख सिद्धांत केवल दार्शनिक धरातल पर ही महत्वपूर्ण नहीं है अपितु वह साहित्य शास्त्र के मानदंडों पर भी खरे उतरते हैं।

शब्द कुंजी – श्रीशिवमहापुराण , आलंकारिक विश्लेषण, कारणमाला अलंकार, भक्ति – विज्ञान, सत्य ।

प्रस्तावना – श्री शिव महापुराण का पौराणिक साहित्य में अद्धितीय स्थान है। यह महापुराण भारतीय साहित्य में नक्षत्र के सामान दैदीप्यमान है। यहां केवल कथाओं का ही संकलन नहीं है अपितु वेदों के गुण रहस्य को सरल रूप में व्याख्यान है। इस शोध पत्र का मुख्य लक्ष्य शिव महापुराण की कुछ प्रमुख सूक्तियां के आधार पर भक्ति, ज्ञान, सत्य और लोक व्यवहारों को आलंकारिक धरातल पर प्रस्तुत करना है। हम इस शोध पत्र में देखेंगे की किस प्रकार अलंकारों के माध्यम से दार्शनिक ज्ञान को शिव महापुराण में सरल रूप से प्रस्तुत किया गया है।

भक्ति: ज्ञान और विज्ञान की जननी – श्रीशिवमहापुराणके अनुसार ज्ञान और विज्ञान की उत्पत्ति भक्ति के द्वारा ही होती है –

विज्ञानस्य च सन्मूलं भक्तिरव्यभिचारिणी।
ज्ञानस्यापि च सन्मूलं भक्तिरेवाऽभिधीयते।।

भावार्थ: विज्ञान का आधार अनन्य भक्ति है और ज्ञान का मूल भी भक्ति को ही कहा गया है।

विश्लेषण: श्लोक के अर्थ को समझने के लिए ज्ञान और विज्ञान के मध्य सूक्ष्म अर्थ को समझना अत्यंत आवश्यक है। भारतीय ज्ञान परंपरा में इसका अर्थ स्पष्ट रूप से परिभाषित है–

ज्ञान: शास्त्र को पढ़कर और सुनकर या अनुभव या तर्क के आधार पर जो तथ्यों की प्राप्ति होती है उसे ज्ञान कहते हैं। उदाहरण स्वरूप यह जानना की है ईश्वर कण–कण में है यह ज्ञान है।

विज्ञान: जब ज्ञान को मानव अपने व्यवहार में उतारता है और वह ज्ञान प्रयोग के आधार पर सिद्ध हो जाता है, तब वह विज्ञान बनता है। अर्थात विशिष्ट ज्ञान ही विज्ञान है जो सुसंगत प्रयोग के आधार पर सिद्ध है। उदाहरण के लिए ईश्वर को कण कण में देखना अनुभव करना ही विज्ञान है।

तर्क यहां पर है कि ज्ञान को विज्ञान में बदलने वाली जो परम शक्ति है, जिसके कारण ज्ञान विज्ञान में परिवर्तित हो जाता है, वह भक्ति है। क्योंकि बिना भक्ति के ज्ञान हृदय ग्राही नहीं हो पाता है ।

अब अव्यभिचारिणी भक्ति क्या है? यह प्रश्न होता है तब व्यभिचार का अर्थ अनेक केन्द्रों पर केंद्रित होना अथवा एक से दूसरे दूसरेसे तीसरे की ओर भटकना होता है। जहां भक्त और भगवान के बीच कोई अन्य ना रहे तब वह अव्यभिचारिणी भक्ति कहलाती है। गीता में भगवान श्री कृष्णा भी इसी को सर्वोपरि बताते हैं।

जब साधक का चित्त ईश्वर में स्थिर हो जाता है अन्यत्र कहीं नहीं भटकता तब ज्ञान रूपी कल्पवृक्ष फलित होता है और विज्ञान में परिणत हो जाता है ।

अधिकतर यह सोचा जाता है कि भक्त तो भावुक होता है और ज्ञानी विचारवान होता है परंतु यह श्लोक यह सिद्ध करता है कि भक्ति के बिना ज्ञान शुष्क है जो विज्ञान में परिणाम नहीं हो सकता है। यहां एक प्रश्न उत्पन्न होता है की भक्ति ही मूल क्यों ?

तब भक्ति का अर्थ अनंत प्रेम है । तब विचार कीजिए जिस वस्तु के प्रति हमारा प्रेम होता है वहां हमारी एकाग्रता हमारा ध्यान स्वत ही केंद्रित हो जाता है। और एकाग्रता से जिज्ञासा और जिज्ञासा से ज्ञान की उत्पत्ति स्वाभाविक ही है। क्योंकि क्रिस्टल से प्रेम है यह विषय कृष्ण के बारे में जानने के लिए प्रेरित करेगा की कृष्णा कैसे दिखते हैं ? कृष्ण के नेत्र कैसे हैं ? कृष्ण का मुख कैसा है ? कृष्ण क्या है? यह जिज्ञासा ज्ञान के रूप में परिणत होती है और भक्ति के कारण वही ज्ञान विज्ञान के रूप में स्थापित हो जाता है।

भक्ति में समर्पण भी एक मुख्य कारण है क्योंकि जब हम किसी विषय के प्रति समर्पित हो जाते हैं तभी उसे विषय को पूर्ण रूप से जान पाते हैं। और जब यह सब विचार हमारे संवेगों से जुड़ता है तभी वह हमारे अनुभव का विषय बन पाता है। यदि आपको पता है की ईमानदारी अच्छी नीति है यह ज्ञान है पर उसे ईमानदारी के प्रति अगर आपकी भक्ति नहीं है तो प्रलोभन आने पर आप डगमगा सकते हैं और अगर आप नहीं डगमगाते हैं तो वही

विज्ञान बन जाता है।

यह सूत्र हमें यह सिखाता है कि केवल जानकारी प्राप्त करना ही पर्याप्त नहीं है उनको अपने जीवन में उतरना प्रमुख है। अत: भक्ति वह अग्नि है जो ज्ञान को पुष्ट कर विज्ञान में बदल देती है। यही कारण है कि श्री शिव महापुराण में भक्ति को ज्ञान और विज्ञान का मूल कहा गया है।

अब प्रश्न यह होता है कि भक्ति होती क्या है? और इसकी हृदय में जागृति कैसे होती है? तब महापुराण में प्राप्त होता है –

संगत्या गुरुराप्येत गुरोर्मन्त्रादिपूजनम्।
पूजनाज्जायते भक्तिर्भक्त्या ज्ञानं प्रजायते।।

भावार्थ: सतसंगति से गुरु की प्राप्ति होती है । गुरु की कृपा से मंत्र और पूजन आदि विधि का ज्ञान प्राप्त होता है । पूजन से भक्ति का उद्भव होता है और भक्ति से ज्ञान की उत्पत्ति होती हैं।

विश्लेषण: प्रस्तुत श्लोक एक तार्किक कम को प्रस्तुत करता है। इससे ज्ञात होता है कि आध्यात्मिक जगत में कोई भी घटना आकस्मिक में नहीं होती है वरुण उसके पीछे एक पूरा कम रहता है।

संगति: जीवन में संगति जिस प्रकार की होती है वैसा ही मनुष्य का आचरण होता है।

एक युक्ति प्रसिद्ध है कि जैसा खाए अन्न वैसा होए मन । अत: जैसी संगति करता है उसी प्रकार का उस मनुष्य का चरित्र निर्माण होता है। सत् संगत कोई केवल प्रवचन सुनना नहीं है वरन् सत्य के साथ संग करना है। जिसके कारण गुरु की प्राप्ति होती है।

गुरु की प्राप्ति: सत्संगति के फल स्वरुप गुरु की प्राप्ति होती है। गुरु वह तत्व है जो शिष्य के सोए हुए विवेक को जागृत करता है। और गुरु के द्वारा जो मंत्र पूजन विधि आदि दिए जाते हैं इसका अभ्यास करना होता है यह अभ्यास ही तप है। जिसके कारण अहंकार का नाश होता है।

भक्ति की प्राप्ति: निरंतर अभ्यास का फल भक्ति है। भक्ति कोई अचानक प्राप्त हुई वस्तु नहीं है। यह मंत्र जाप करते–करते जब हृदय द्रवित हो जाता है, जब ईश्वर के प्रति प्रेम आगा हो जाता है, तब भक्ति का हृदय में उदय होता है।

ज्ञान की प्राप्ति : यहां ज्ञान का अर्थ जानकारी न होकर साक्षात्कार है जब भक्ति अपने चरम पर होती है तब ईश्वर साक्षात्कार रूपी ज्ञान की प्राप्ति होती है।

मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण– यह श्लोक मनोविज्ञान के भी अनुकूल है की क्योंकि संगति ही व्यक्ति के व्यक्तित्व का निर्धारण करती है। आपका परिवेश आपकी सोच के लिए करणकारण के रूप में कार्यकर्ता है।

बिना गुरु के किसी भी क्षेत्र में महारत हासिल करना लगभग असंभव सा है। और निरंतर अभ्यास ही हमें परिपक्व बनता है। जब आप अपने किसी भी कार्य या लक्ष्य के प्रति समर्पित हो जाते हैं उससे प्रेम करने लगते हैं तभी उसे कार्य में गहराई प्राप्त होती है। और अंतत: आप उसे विषय के ज्ञानी बन जाते हैं।

दार्शनिक विश्लेषण– यहां ज्ञान और विज्ञान दोनों का मूल अव्यभिचारिणी भक्ति को कहा गया हैं। यह अव्यभिचारिणी शब्द अत्यन्त सूक्ष्म अर्थ समेटे हुए है। यह उस अनन्य प्रेम का द्योतक है जहां अपने इष्ट के अतिरिक्त चित किसी भी अन्य विषय के लिए आसक्त नहीं होता है।

आलंकारिक विश्लेषण – प्रस्तुत उदाहरणों में काव्यलिंग और कारणमाला का उपयोग हुआ है । आचार्य मम्मट के अनुसार –

कव्यलिंगं हेतोर्वाक्यपदार्थता।
यथोत्तरं चेत्पूर्वस्य पूर्वस्यार्थस्य हेतुता।
तदा कारणमाला स्यात् ।।

ज्ञान विज्ञान के कारण के रूप में भक्ति की स्थापना तर्क पूर्ण काव्य का उदाहरण है।

मोक्ष मार्ग में संगति से लेकर ज्ञान तक की यात्रा माला के रूप में वर्णित है। ज्ञान की उत्पत्ति कोई आकस्मिक घटना नहीं है, इसके पीछे अनेक कार्य और कारण है। इस विषय को यहां कारणमाला अलंकार ने अत्यंत सौंदर्य पूर्ण रूप से प्रकट किया है।

श्रीशिवमहापुराण यहां तथ्य को परिभाषित करता है कि ज्ञान कोई वस्तु नहीं है जिसे खरीदा जा सके या केवल किताब पढ़ कर पाया जा सके। यह एक क्रमिक विकास है।

अन्त:करण शुद्धिकी अनिवार्यता– बिना अंत:करण शुद्ध के ज्ञान का उदय संभव ही नहीं है इस विषय को शिव महापुराण में बड़ी सुंदरता से प्रस्तुत किया गया है–

यथा च मलिने वस्त्रे रंग: शुभतरो न हि।
क्षालने हि कृते शुद्धे सर्वो रंग: प्रसज्जते।।
तथा च निर्मले देहे देवानां सम्यगर्चया।
ज्ञानरंग: प्रजायेत तदा विज्ञानसंभव:।।

भावार्थ: जैसे मालिन वस्त्र पर नवीन रंग करने पर भी वह रंग शोभाया मन नहीं होता है वस्त्र को धोने के बाद ही उसे पर रंग सुशोभित होता है। वैसे ही देवों के अर्चन से जब अंत:करण निर्मल हो जाता है तब उस पर ज्ञान रूपी रंग की चढ़ता है तभी विज्ञान संभव होता है।

दृष्टांत अलंकार की भूमिका – इन श्लोक में दृष्टांत अलंकार का अत्यंत उत्कृष्ट प्रयोग हुआ है। आध्यात्मिक जो विषय अत्यंत गूढ़ और अमूर्त है उसे विषय को कपड़े और रंग के माध्यम से अर्थात मूर्त माध्यम से समझाया गया है।

मैला वस्त्र – यह हमारी देह का प्रतीक है इसमें अभ्यांतर करण और बाह्य कारण दोनों सम्मिलित है जो कि काम क्रोध लोभ मोह अहंकार आदि अशुद्धियों से युक्त है जिसका कहीं ना कहीं हेतु बाह्य कारण के श्रव्य दृष्ट अनुभव गम्य कारण है।

क्षालन – जैसे कपड़े को अच्छे से रगड़ कर जल और मार्जक से साफ करना पड़ता है उसी प्रकार तप, संयम , सदाचार के माध्यम से चित्त की शुद्धि करनी होती हैं।

रंग – यहां रंग ज्ञान का प्रतीक है क्योंकि वस्त्र अगर गंदा है तो उसे पर कितना भी रंग लगा लिया जाए वह रंग कितना भी महंगा क्यों ना हो परंतु वह ठीक रूप से नहीं चढ़ेगा वह मटमेला ही दिखेगा ।

निर्मल देह – यहां देह का अर्थ केवल बाह्य शेयर ना होकर अंत: करण चतुष्टय है।

दार्शनिक और मनोवैज्ञानिक विश्लेषण– भारतीय दर्शन में ज्ञान सीधे प्राप्त नहीं होता हैं। पहले चित्त की शुद्धि करनी होती है देवताओं का पूजन, मंत्र जाप यह मन को शुद्ध करने का एक मनोवैज्ञानिक माध्यम है वैसे ही पहले ज्ञान की सैद्धांतिक समझ आती है और जब वह पक्का हो जाता है जैसे रंग पक्का हो जाता है तब वह विज्ञान बन जाता है। अत: जिस प्रकार मलिन वस्त्रों पर बहुमूल्य रंग भी लगा दे तब अभी वह वह सुंदरता को प्राप्त नहीं होगा जो सुंदरता को उसे प्राप्त होना चाहिए था। इस प्रकार विकार युक्त देह

या चित्त में ईश्वर ज्ञान स्थिर नहीं होता है। जिस प्रकार वस्त्र का प्रक्षालन आवश्यक है, उसी प्रकार मन और देह का भी आवश्यक है।

व्यावहारिक जीवन में उपयोगिता – प्रस्तुत श्लोक हमें सिखाते हैं कि किस प्रकार ज्ञान प्राप्ति के लिए पात्रता की आवश्यकता होती है। पात्रता के साथ ही अनुशासन अत्यंत आवश्यक है।

प्रस्तुत श्लोक इस तथ्य को उद्भाषित करते हैं कि शुद्धता ही ज्ञान के लिए अनिवार्य शर्त है। अगर मलिन बर्तन में स्वच्छ जल रख दिया जाए तब वह जल पीने योग्य नहीं रहता है। उसी प्रकार मालिन मन होने पर प्राप्त ज्ञान अहंकार बन जाता है। अत: विज्ञान की प्राप्ति के लिए शुद्धिकरण प्रथम अनिवार्य शर्त है।

भगवान शिव के नाम की महिमा –

शिवनामामृतं पेयं पापदावानलार्दितै:।
पापदावाग्नितप्तानां शान्तिस्तेन विना न हि।।

भावार्थ: संसार की तापो की अग्नि से आहत प्राणियों को शिव नाम रूपी अमृत का पान करना चाहिए। तापो से तप्त प्राणियों को शिव नाम के बिना शांति प्राप्त नहीं हो सकती।

आलंकारिक विश्लेषण– यहां रूपक जीवन के कठिन मार्ग को किस प्रकार शिव नाम के द्वारा सरलता से पार किया जा सकता है, इस विषय को प्रकट करता है।

यहां निरंग रूपक है यहां भगवानशिव के नाम पर अमृत का आरोप है तथा पाप पर दावानल का अभेद आरोप किया गया है।

दार्शनिक और मनोवैज्ञानिक विश्लेषण– भारतीय दर्शन शास्त्र में पाप वह अशांति, असंतोष है जो हमें सत्य से दूर करता है। पाप के द्वारा मनुष्य भीतरी भीतर जलता रहता है। क्योंकि क्रोध, लोभ, इर्षा की अग्नि उसे शांति प्राप्त होने ही नहीं देती है।

शिव शब्द का अर्थ ही कल्याण है। जब कोई नहीं जब कोई निरंतर इस नाम का जाप करता है तो इस नाम की ध्वनि तरंगें उसके अंतकरण चतुष्टय को शुद्ध कर देती है। शिव नाम को प्रस्तुत श्लोक में अमृत बताया गया है और अमृत का स्वभाव है कि वह अमरता देता है वह शीतलता देता है। अर्थात पाप रूपी अग्नि जहां जलन उत्पन्न करती है वहीं शिव नाम रूपी अमृत शीतलता प्रदान करता है। कष्ट का निवारण करता है। और इसकी अनिवार्यता है। सांसारिक साधन पाप रूपी अग्नि को शांत करने में सक्षम नहीं है। परंतु वह अग्नि कितनी भी भयानक क्यों ना हो शिव नाम रूपी अमृत की एक बूंद ही उसे शांत करने के लिए पर्याप्त है।

सत्य का महत्त्व– शिशु महापुराण में सत्य के स्थान को सर्वोपरि रखा गया है। सत्य के विषय में कहते हुए पुराणकार कहते हैं –

सत्यमेव परं ब्रह्म सत्यमेव परं तप:।
सत्यमेव परो यज्ञ: सत्यमेव पर श्रुतम्।।
सत्यं सुप्तेषु जागर्ति सत्यं च परम पदम्।
सत्येनैव धृता पृथ्वी सत्ये सर्व प्रतिष्ठितम ।।

भावार्थ: सत्य ही परम ब्रह्म है, सत्य ही परम तप है। सत्य ही परम यज्ञ है और सत्य ही परम श्रुति है।

जब सब सो रहे होते हैं तब भी सत्य जागता रहता है। सत्य ही परम पद है। पृथ्वी सत्य के कारण ही स्थिर है। इस संसार में जो कुछ है वह सभी सत्य में प्रतिष्ठित है।

दार्शनिक विश्लेषण: यहां सत्य को केवल एक नैतिक आचरण नहीं माना गया है बल्कि सत्य को ही परम ब्रह्म कहा गया है सत्य के स्थान को केवल आचरण तक सीमित न रखकर उसको ब्रह्मांडीय स्वरूप दिया गया है। सत्य की सत्ता को सर्वोच्च बताया गया है।

यहां बताया गया है कि सत्य की शक्ति से ही पृथ्वी स्थिर है। यह तथ्य वैज्ञानिक भी है क्योंकि वैज्ञानिक नियम अटल है, सत्य है।अगर गुरुत्वाकर्षण का सत्य ना रहे तो पृथ्वी को नष्ट होने में क्षण भी नहीं लगेंगे।

आलंकारिक विश्लेषण: यहां सत्य शब्द की आवृत्ति कर्ण मधुर हैं, जो लाटानुप्रास की स्थिति है। यह आवृत्ति अर्थ गौरव को बढ़ाती है।

भक्ति और ज्ञान की परिणति अंतत: सत्य में होती है। जिसे हम विज्ञान कहते हैं, वह इस सत्य का ही अनुभव है।

महापुरुषों का स्वभाव – श्रीशिवमहापुराण में महापुरुष के स्वभाव के विषय में उल्लेख है–

महतां च स्वभावोऽयं कल्पवृक्षसमो मत:।।
लघुत्वं च महत्त्वं च नात्र कार्या विचारणा।
उत्तमानां स्वभावोऽयं यद्दीनप्रतिपालनम्।।

भावार्थ: महान लोगों का स्वभाव कल्पवृक्ष के समान माना जाता है।

उनके लिये छोटा और बड़ा यह विचार का विषय नहीं है उत्तम लोगों का तो स्वभाव ही है कि वह दीनों का पालन करते हैं।

विश्लेषण: महापुरुषों का तो स्वभाव ही परोपकार में है वह अपने स्वार्थ के लिए नहीं बल्कि स्वभावगत रूप से ही परोपकार परायण रहते हैं।

आलंकारिक विश्लेषण: यहां महापुरुषों की तुलना कल्पवृक्ष से की है। अत: उपमा अलंकार का प्रयोग है।

जिस महापुरुष के स्वभाव का यथार्थ चित्रण संभव हुआ है। क्योंकि जिस प्रकार कल्पवृक्ष अपने आश्रितों की रक्षा करते हैं, उसी प्रकार महापुरुष भी अपने आश्रित जनों की रक्षा करते हैं।

निष्कर्ष – प्रसिद्ध शोध पत्र यह सिद्ध करता है कि श्री शिव महापुराण की सूक्तियो में ज्ञान और भक्ति का समन्वय है। ये सूक्तियां केवल संदेश नहीं देती है वरन् उपमा, रूपक जैसे अलंकारों का विन्यास है। जिसके कारण अत्यंत कठिन दार्शनिक ज्ञान भी जनसाधारण के लिए सुलभ हो जाता है। निष्ठा पूर्वक किया गया सत्य पालन और गुरु कृपा ही मनुष्य को पाप से मुक्त कर शिव तत्व की प्राप्ति करा सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. श्री शिवमहापुराण, गीता प्रेस गोरखपुर प्रथम संस्करण संवत् 2076.
2. काव्यप्रकाश, आचार्य मम्मट, ज्ञान मंडल लिमिटेड वाराणसी 1960.
3. पुराणपर्यालोचनम्, श्रीकृष्णमणी त्रिपाठी, चौखंबा सुरभरती प्रकाशन वाराणसी संस्करण 2012.
4. सर्वदर्शन सङ्ग्रह:, माध्वाचार्य, खेमराज श्रीकृष्णदास मुम्बय्याम्, सम्वत 1962.

****